ISSN : 3108-0294
Asha Paras Vahuvishyak Bhartiya Shodh-Patrika
(BI-ANNUAL PEER-REVIEWED, ONLINE RESEACH JOURNAL)
आशा पारस वहुविषयक भारतीय शोध-पत्रिका
(अर्द्धवार्षिक सहकर्मी-समीक्षित, ऑनलाइन शोध पत्रिका)
ISSN : 3108-0294
खंड-2, अंक-1, अप्रैल-सितंबर, 2026, apvbsp@gmail.com www.apvbsp.com

विशेष -

स्त्री निर्मित कथा साहित्य में महिला उत्पीड़न : अंतरविश्लेषण में उभरते विचार बिन्दु

आशा शुक्ला
पूर्व कुलगुरु, डॉ. बी आर अंबेडकर
सामाजिक विज्ञान विश्वविद्यालय, महू एवं
प्रबंध निदेशक, आशा पारस फॉर पीस एंड हारमनी फाउंडेशन, भारत
एवं
संगीता सक्सेना,
पूर्व परियोजना समन्वयक, महिला अध्ययन विभाग,
बरकतउल्लाह विश्वविद्यालय, भोपाल

स्त्री रचित आरंभिक कथा साहित्य में यद्यपि आदर्शोन्मुख यथार्थ के दर्शन अधिक होते हैं, नारी उत्पीड़न में भी अधिकांशतः पारिवारिक उत्पीडन एवम् सामाजिक रूढ़ियों जैसे परदा प्रथा, दहेज प्रथा, सती प्रथा, आदि के कारण होने वाले उत्पीडन को उठाया गया है तथापि उनका ऐतिहासिक महत्व है। नारी के अधिकार एवम् अस्मिता को जतलाने-बतलाने की कोशिश स्त्री निर्मित कथा साहित्य में यूं तो 70 के दशक से ही आरंभ हो चुकी थी परंतु 90 के दशक तक आते-आते तो महिला कथाकारों ने स्त्री के आत्माभिमान, आत्मचेतना एवम् आत्म निर्णय की शक्तियों को झकझोर ही डाला। नारी जीवन की समस्त विसंगतियों, विडम्बनाओं तथा विरोधाभासों को उभारने वाली आज की कहानियाँ न सिर्फ समाज में महिला चेतना के लिए उत्प्रेरक का कार्य कर रही हैं अपितु अपना स्वतंत्र आचारशास्त्र एवम् सौन्दर्यशास्त्र भी निर्मित कर रही हैं। इन्हें भारतीय स्त्रियों की दुनियाँ के पुनर्जागरण काल का लिखित दस्तावेज भी मान लिया जाए तो अत्युक्ति न होगी।

चूँकि स्त्री निर्मित कथा साहित्य के सृजन का मूल उद्देश्य स्त्री मुक्ति है और यह मुक्ति उत्पीड़न के त्वरित निदान से ही संभव है अतः आलोच्य बीस कथा लेखिकाओं में से कोई भी लेखिका ऐसी नहीं है जिसने अपनी रचना में स्त्री उत्पीड़न को चित्रित न किया हो। लेखिकाएँ जहाँ एक ओर देहरी के भीतर और बाहर हो रहे उत्पीड़न को रेखांकित कर रही हैं वहीं दूसरी ओर समस्या के निदान के लिए भी सम्भावित उपायों पर विचार भी कर रही हैं। यही नहीं आवश्यकता पड़ने पर वे समस्या से संबंधित विभिन्न पहलुओं पर लेखकीय विमर्श भी प्रस्तुत करती दृष्टिगत होती हैं।

उर्मिला शिरीष की कहानियों में मध्यम वर्गीय नारियों की यातना तथा उत्पीडन के चित्र अधिक दृष्टिगत होते हैं। उनकी 'तीसरा मोड', 'हंसी', 'लकीर', 'सहसा बूंद उछली', 'माँ बेटी और चिडिया', 'जीत, पपटशो, 'पुनरागमन', 'पत्थर

ISSN : 3108-0294
Asha Paras Vahuvishyak Bhartiya Shodh-Patrika
(BI-ANNUAL PEER-REVIEWED, ONLINE RESEACH JOURNAL)
आशा पारस वहुविषयक भारतीय शोध-पत्रिका
(अर्द्धवार्षिक सहकर्मी-समीक्षित, ऑनलाइन शोध पत्रिका)
ISSN : 3108-0294
खंड-2, अंक-1, अप्रैल-सितंबर, 2026, apvbsp@gmail.com www.apvbsp.com

की लकीर, 'हिसाब', 'शून्य', 'सिगरेट', 'कोशिश', 'शहर में अकेली लड़की, 'चौथी पगडंडी, 'अंतिम यात्रा के पहले', 'स्वांग' आदि कहानियाँ कभी संपूर्णतः तो कभी अंशतः वैवाहिक एवम् पारिवारिक उत्पीड़न को चित्रित करती हैं, जबकि 'टोहनी' कहानी में सामाजिक स्तर पर प्रताड़ित स्त्री का चित्रण है। लेखिका संवेदना के स्तर पर स्त्री की पीड़ा महसूस कराने के अतिरिक्त अनेक प्रश्न उठाकर पाठकों को बौद्धिक स्तर पर झकझोरती भी है यथा-" लड़कियों के साथ ही ऐसा क्यों होता है... पौराणिक काल से लेकर आज तक... सदियों से लेकर अब तक महाभारत में द्रौपदी को अपमानित होना पड़ा था.... पुरुष की महत्वाकांक्षाओं, सत्ता शक्ति, मान-अपमान अभिमान के कारण पतियों द्वारा जुए में हारकर भरी सभा में निर्वसन द्रौपदी होती है, तो उधर रावण द्वारा हरण की गई सीता को राम ने निर्वासित कर दिया... तो अहल्या को पत्थर बनना पड़ा। लड़कियाँ ही बनती हैं कारण, शिकार। समय समाज और व्यवस्थाओं के बीच फंसी लड़कियाँ।"" स्त्री उत्पीडन के बारे में कथाकार के व्याकुल मन की पुकार कुछ इस तरह प्रकट होती है- "क्यों नहीं समझते लोग कि एक लड़की के पीड़ित होने से उस परिवार के कितने लोग पीड़ित हो जाते हैं, कितनों की नींद उड़ जाती है, मुस्कराना छोड़ देते हैं, रिश्तों की पवित्रता और गहराई से विश्वास उठ जाता है, जवान होती लड़कियों के सपने चूर-चूर हो जाते हैं। कौन कहता है कि इतने पढ़े-लिखे समाज में लड़कियों पर अत्याचार नहीं होते। मुझसे पूछो मेरी आँखों ने जो देखा, वो कितना कुरूप और दर्दनाक था।"

वरिष्ठ लेखिका कृष्णा सोबती ने अपने उपन्यासों 'समय-सरगम', 'दिलोदानिश', 'ए लड़की आदि में प्रमुखतः संयुक्त परिवारों में हो रहे स्त्री उत्पीड़न को उकेरने के साथ-साथ उन परिस्थितियों एवम् कारणों का भी चित्रण किया है जिनके कारण स्त्रियाँ उत्पीड़ित होती हैं। वृद्धावस्था में विभिन्न कारणों से उत्पीड़ित होती स्त्रियाँ 'समय-सरगम' में दृष्टिगत होती हैं तो पितृसत्तात्मक व्यवस्था में पुरुषों की मनमानी के कारण उत्पीड़ित होती स्त्रियाँ 'दिलोदानिश' में परंतु फिर भी कृष्णा जी विवाह का समर्थन ही करती हैं। 'ए लड़की' में अम्मू तथा उनकी लड़की के मध्य हुये वार्तालाप में उन्होंने कई जगह एकाकी जीवनयापन की तुलना में वैवाहिक जीवन का ही समर्थन किया है।

कृष्णा जी की मुख्य चिंता सामाजिक परिवर्तनों के उपरांत भी पुरूष की तुलना में नारी की द्वैतीयक स्थिति के विषय में ही है क्योंकि नारी उत्पीड़न का मूल कारण भी वस्तुतः यही है। वे लिखती हैं-"पुरानी व्यवस्था अब भी कायम है, नये बदलावों के साथ। लड़के और लड़की में भेद। परिवार में पुत्री और पुत्र का अबोला द्वंद्व जारी है। गर्भ से ही पुत्रियों की हत्या और पुत्रों के संरक्षण साधन, भाई-बहनों में झगड़े चलते रहते हैं। कानून बन चुके हैं, मगर इन्हें लागू कौन करेगा?"3

वस्तुतः स्त्री की लड़ाई पुरुष से नहीं पितृसत्तात्मक मान्यताओं से है। कृणा सोबती के सभी उपन्यास अंततः इसी ओर इंगित करते हैं।

आधुनिक रचनाकार गीतांजलि श्री अपने उपन्यास 'माई' में जहाँ पितृसत्ता को स्त्री उत्पीड़न का प्रमुख कारण मानती हैं, वहीं 'हमारा शहर उस बरस' में साम्प्रदायिक दंगों के कारण होने वाले उत्पीड़न को चित्रित करती हैं। 'अनुगूँज' की

कहानियाँ प्रमुखतः 'बेलपत्र' तथा 'प्राइवेट लाइफ' में महिलाओं को अभिव्यक्ति एवम् निर्णय की स्वतंत्रता प्राप्त न होने के कारण होने वाले उत्पीड़न को रेखांकित किया गया है। उपर्युक्त कहानियों में यह भी दर्शाने की कोशिश है कि समाज द्वारा जब बार-बार स्त्री के निर्णय पर प्रश्न खड़े किये जाते हैं तब वह न सिर्फ मानसिक रूप से टूट जाती है अपितु लोगों की प्रश्नवाचक निगाहों से बचने के लिए एकाकी जीवन भी व्यतीत करने लगती है। एक स्वस्थ लड़की का यूं स्वकेन्द्रित एवम् कुंठित हो जाना न समाज के लिए उचित है और न ही स्वयं स्त्री के लिए।

चन्द्रकांता की कहानियों में कश्मीर में साम्प्रदायिक दंगों एवम् आतंकवाद के कारण हुए स्त्री उत्पीड़न के अतिरिक्त स्त्री के पारिवारिक उत्पीड़न का भी विशद चित्रण है वे उत्तर आधुनिकता के कारण बढ़ती हुई स्त्री समस्याओं को भी रेखांकित करती है। 'लगातार युद्ध' कहानी में वे पढ़ी-लिखी वेटनरी डॉक्टर स्त्री गुरप्रीत के माध्यम से सक्षम लड़कियों के वैवाहिक उत्पीड़न को दर्शाती हैं, तो 'इस दौड़ की कहानी के माध्यम से पालकों की मृत्यु के पश्चात् हुए अविवाहित स्त्री के उत्पीड़न को। आधुनिकता के कारण अकेली होती वृद्ध पीढ़ी के दर्द को उन्होंने 'रात में सागर' कहानी में व्यक्त किया है। उनका नवीनतम उपन्यास 'कथा सतीसर' वृहद परिवेश में कश्मीरी पंडितो की त्रासदी को व्यक्त करता है। उन्हें आंतकवादियों की ओर से निरंतर धमकियाँ मिल रही हैं। इन आतंकवादियों का नारा है-"असि गधि-आसुन पाकिस्तान, बटव बगैर तु बटन्येव सान।" अर्थात् हमें क्या चाहिए पाकिस्तान, पंडितो के बिना पंडिताइनों को साथ। कहना न हो होगा कि पंडितो की हत्या तथा पंडिताइनों के साथ बलात्कार भी उनकी इसी मानसिकता के कारण हो रहे हैं। उपन्यास में व्यक्त लल्ली की पीड़ा-"इस रोशनी और अंधेरे के खेल में धब्बा भी तो नहीं हमारा अस्तित्व, फिर कहाँ अटते हैं, हमारे छोटे बड़े सुख-दुख, मलाल और शिकवे? कही हमने अपने बारे में सोच-सोच कर ही तो अपने दुःख बढा नहीं दिये? साम्प्रदायिकता एवम् विस्थापन के कारण उत्पीड़ित होती स्त्रियों को दर्द को व्यक्त करने के लिए पर्याप्त है।

चित्रा मुद्गल् की कहानियों में जहाँ मध्यम एवम् निम्न मध्यमवर्गीय महिलाओं के पारिवारिक एवम् सामाजिक उत्पीड़न को उठाया गया है, वहीं अपने उपन्यासों 'आंवा' तथा 'एक जमीन अपनी' में वे अपनी पहचान बनाने के लिए संघर्षरत युवतियों के उत्पीड़न को भी अभिव्यक्त करती हैं। स्त्री श्रम का शोषण, पुरूष की स्त्री को मात्र भोग्या समझने की मानसिकता के अतिरिक्त पितृसत्तात्मक मूल्यों की वाहिका अंजना वासवानी जैसी स्त्रियाँ भी उनकी चिंता का प्रमुख विषय हैं। 'एक जमीन अपनी' में स्त्रियों को स्वतंत्रता का सपना दिखाकर उपभोक्तावादी संस्कृति एवम् मीडिया द्वारा स्त्री को मात्र देह बना देने की साजिश का पर्दाफाश किया गया है। उत्पीड़ित स्त्रियों को वे सलाह देती हैं कि "अपना हक अपने पसीने से ही मिलता है। पसीना चाहे श्रम का हो या संघर्ष का, प्रतिवाद का हो या आक्रोश का। उससे सुलगाओ, उससे मुलाकात करो। तुम शायद उससे मिले बिना ही डर गईं। डरो मत, उठो, उठकर चलो। उदास मौसम के खिलाफ जो अपने से लड़ सकता है, वही उससे लड़ सकता है जिन्होंने उजाले पर कालिख पोतने के लिए अपने हाथों को काला कर लिया है।"

ISSN : 3108-0294
Asha Paras Vahuvishyak Bhartiya Shodh-Patrika
(BI-ANNUAL PEER-REVIEWED, ONLINE RESEACH JOURNAL)
आशा पारस वहुविषयक भारतीय शोध-पत्रिका
(अर्द्धवार्षिक सहकर्मी-समीक्षित, ऑनलाइन शोध पत्रिका)
खंड-2, अंक-1, अप्रैल-सितंबर, 2026, apvbsp@gmail.com www.apvbsp.com

जया जादवानी की कहानियाँ न सिर्फ मध्यम एवम् उच्च वर्गीय नारियों के उत्पीड़न को रेखांकित करती हैं, अपितु स्थान-स्थान पर उन्हें व्याख्यायित भी करती चलती हैं। उनकी कहानियाँ 'कयामत का दिन उर्फ कब्र से बाहर', 'परिदृश्य', 'ये रात कितनी लम्बी है', 'फिर-फिर लौटेगा', 'मेरी कोई तस्वीर नहीं', 'सिर्फ इतनी सी जगह' आदि पारिवारिक उत्पीड़न का दस्तावेज हैं। जया जी का यह मानना है कि अपने निर्णय स्वयं न ले पाने की विवशता के कारण स्त्री निरंतर उत्पीड़ित होती है परंतु इसके साथ ही वे प्रतिरोध न करने की स्त्री मानसिकता को भी इसके लिए जिम्मेदार मानती हैं-"यह सब अपनी-अपनी कब्र में सोई औरतें हैं, सदियों से अपने से बेखबर, अनगढ़ पत्थर किसी ने पूजना चाहा पूज लिया, किसी ने हरना चाहा, हर लिया, किसी ने बेचना चाहा, बेच लिया, किसी ने पटाना चाहा, पटा लिया। जो भी मेकर होना चाहता है, हो सकता है मल्टीपरपस जिस्म लिये वह हर हाल में खुश हैं। तकलीफ सिर्फ तब होती है जब वे कब्र से जाग जाती हैं।"" जाहिर है, औरत का कब्र से जागना अपने अधिकारों, अस्तित्व और अस्मिता की रक्षा के लिए उठ खड़ा होना है। पितृसत्ता को इससे तकलीफ तो होती है परंतु वर्तमान परिस्थितियों में यह नितांत आवश्यक भी है।

नमिता सिंह की कहानियों में 'अँगूठी', 'या देवी सर्वभूतेशु', 'बंतो', 'गणित', 'गलत नम्बर का जूता' आदि स्त्री उत्पीड़न को व्यक्त करने वाली प्रमुख कहानियाँ हैं। वे पारिवारिक एवम् वैवाहिक उत्पीड़न का मूल कारण पुरुषों की आधिपत्य भावना को मानती हैं। पुरुष आज भी स्त्री को मात्र सम्पत्ति या भोग विलास की वस्तु ही मानते हैं। वे अपनी कहानी 'सलीबें' में लिखती हैं-"यह जिन्दगी तो जैसे अंधेरे घने जंगल से निकलने वाली पगडंडी का नाम है। कब किधर कोई बाघ या भेड़िया हमला कर दे। किसी पेड़ के पीछे से जंगली सूअर दौड़ता हुआ आये और टक्कर मारकर गिरा दे, कुछ पता नहीं।"

'अँगूठी' के माध्यम से उन्होंने किशोरियों के ऊपर संदेह करने की मानसिकता एवम् उसके दुष्परिणामों को चित्रित किया है। उनकी कुछ कहानियों में उत्पीड़न का प्रतिरोध दृष्टिगत होता है, जबकि कुछ में स्त्रियाँ स्थिति को चुपचाप सहती नजर आती हैं।

नासिरा शर्मा की मान्यता है कि स्त्रियों की समस्या समूची व्यवस्था से जुड़ी हैं अतः उन्हें देश, काल, परिस्थितियों से परे व्यापक संदर्भों में देखा जाना चाहिए। उनकी अधिकांश कहानियाँ इराक तथा ईरान की पृष्ठभूमि पर लिखी गई हैं 'इब्नेमरियम', गुंचा दहन', 'जरा सी बात', गूँगा आसमान', 'पहली रात' आदि में वे युद्ध तथा गैस कांड आदि जैसी मानव निर्मित त्रासदियों के कारण उत्पीडित होती स्त्री को चित्रित करती हैं, वहीं अपने उपन्यासों में वे मूलतः स्त्री के पारिवारिक एवम् सामाजिक उत्पीड़न को व्याख्यायित करती नजर आती हैं। अपने लेखन के बारे में उनका मानना है कि "इस मतलबी समाज में जो दुःखी है वही मेरी सोच के अक्षांश पर आते हैं, आ सकते हैं। किसी को दुःखी व्यक्ति का विलाप सुनने और उसे चित्रित करने की फुर्सत नहीं है। इसलिए मैंने अपनी आईडेन्टिटी दुखी और आर्त लोगों के साथ बनाई है।" नारी उत्पीड़न से मुक्ति की राह वह अन्याय के विरूद्ध आवाज़ उठाने तथा स्वयं अपने बल बूते पर उठ खड़े होने में देखती हैं। 'अक्षयवट' नामक अपने उपन्यास में वे फिरोजजहाँ के माध्यम से स्त्री से 'अपना

ISSN : 3108-0294
Asha Paras Vahuvishyak Bhartiya Shodh-Patrika
(BI-ANNUAL PEER-REVIEWED, ONLINE RESEACH JOURNAL)
आशा पारस वहुविषयक भारतीय शोध-पत्रिका
(अर्द्धवार्षिक सहकर्मी-समीक्षित, ऑनलाइन शोध पत्रिका)
खंड-2, अंक-1, अप्रैल-सितंबर, 2026, apvbsp@gmail.com www.apvbsp.com

रास्ता खुद चुनने', 'गलत के खिलाफ आवाज बुलंद करने', 'किरदार की मजबूती' और 'अपनी दृढ़ता से बदनसीबी का चेहरा बदलने का आव्हान करती हैं।'

समकालीन कहानीकार नीरजा माधव की रचनाओं में मूलतः वैश्वीकरण एवम् भूमण्डलीकरण के कारण उत्पीड़ित होती स्त्री की दशा का चित्रण है। उनकी पैनी दृष्टि न सिर्फ वैश्विक बदलावों को पकड़ती है अपितु भारतीय बालिकाओं, किशोरियों एवम महिलाओं के जीवन में पड़ने वाले उनके प्रभावों को भी रेखांकित करती है। बढ़ती हुई मंहगाई, आर्थिक आवश्यकताओं के कारण छोटी बालिकाओं का घर से बाहर निकलकर उपार्जन करने को विवश होना, धार्मिक एवम् वैवाहिक समारोहों में बढ़ती भव्यता एवम् उन्हें संपन्न कराने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाने वाले श्रमिक समाज की क्षुधा और विवशता भी उनकी दृष्टि से छुपी नहीं है। यही नहीं 'उपसंहार': अब क्या करें" कहानी में वे स्वयं नारी विमर्श पर भी व्यंग करती दृष्टिगत होती हैं। समग्रतः नीरजा की कहानियाँ स्त्री उत्पीड़न को विविध कोणों से न सिर्फ व्यक्त करती हैं अपितु उठाये गये विषयों पर चिंतन करने को भी विवश करती हैं।

स्वर्गीय प्रभा खेतान के प्रमुख स्त्री चरित्र परम्परागत, पितृसत्तात्मक, संयुक्त मारवाड़ी परिवारों में स्त्री के उत्पीड़न को अभिव्यक्त करते हैं। 'छिन्नमस्ता' की प्रिया तथा 'पीली आंधी' की सोमा आर्थिक रूप से सम्पन्न परिवारों से संबंधित होने के बाद भी जीवन निर्णायक स्वतंत्रता से वंचित हैं। उपन्यास 'अग्निसम्भवा' में उन्होंने बालिका हत्या जैसे विषय को उठाया है तो 'आओ पेपे घर चलें' में विदेशी पृष्ठभूमि में स्त्री उत्पीड़न को। इस उपन्यास में आईलिन कहती है कि- 'औरत कहाँ नहीं रोती और कब नहीं रोती? वह जितनी रोती है उतनी ही औरत होती जाती है।"10 परन्तु अंततः प्रभा खेतान कुंठाओं से लड़ती-भिड़ती, जूझती, झुकती-उठती औरत को ध्येय प्राप्ति के लिए दृढ़ संकल्पित होकर आगे बढ़ते हुए ही दिखाती है। यही उत्पीड़ित नारी के लिए उनका स्वप्न है और विमर्श भी।

ममता कालिया ने मध्यम एवम् निम्न मध्यमवर्गीय महिलाओं के दैनिक कार्यकलापों को सहजता से चित्रित करते हुए सामान्य परिवारों में नित्य प्रति घटित होने वाले स्त्री उत्पीड़क प्रसंगों को अपनी कहानियों में उठाया है। उनकी 'उमस' 'चोट्टिन', 'इरादा', 'बोलने वाली औरत', 'जनम', 'सेवा', 'चिर कुमारी', 'बाल-बाल बचने वाले', 'श्यामा', 'प्रति प्रश्न', 'सीमा', 'रिश्तों की बुनियाद', 'लड़कियाँ', 'निर्मोही', 'बाथरूम', 'खानपान' आदि कहानियाँ 'स्त्री उत्पीड़न एवम् तद्धनित प्रश्नों को रेखांकित करती हैं। उनके नवीनतम उपन्यास 'सुक्खम-दुक्खम' में भी विद्यावती, उनकी बहू इंदु व पौत्रियाँ प्रतिभा तथा मनीषा के माध्यम से साठ-सत्तर वर्षों के सामाजिक बदलाव का चित्रण करते हुये स्त्री की चिंताओं, संघर्षों, विरोधाभासों तथा उत्पीड़न का चित्रण किया गया है। ममता कालिया यह मानती हैं कि स्त्री की द्वैतीयक स्थिति का मूल कारण पितृसत्तात्मक विचारधारा है तथा इस विचारधारा की वाहक अनेक बार स्वयं स्त्री होती है। वे लिखती हैं कि- "दुनिया को बेहतर बनाने के लिए अभी बहुत मेहनत करनी होगी। स्वयं को शिक्षित करने के साथ-साथ उस परिवेश को भी बदलना होगा, जिसमें अनिवार्यतः हम सब को जीना है।"" मालती जोशी की कहानियों में स्त्री के पारिवारिक उत्पीड़न के चित्र अधिक दृष्टिगत होते हैं। घर में लड़के-लड़कियों के प्रति होने वाला भेदभाव, दहेज प्रथा के कारण अविवाहित रह जाने वाली लड़कियों की पीड़ा, सगे संबंधियों की कामुक निगाहों के

कारण होने वाले उत्पीड़न आदि के अतिरिक्त आपने विभिन्न संदर्भों में की गई स्त्री उपेक्षा का चित्रण भी अत्यंत सूक्ष्मता से किया है। उनकी कुछ कहानियाँ कामकाजी स्त्री के उत्पीड़न को भी दर्शाती हैं। 'मध्यांतर' इस दृष्टि से विशेष उल्लेखनीय है। यह एक ऐसी लिपिक महिला की कहानी है जो घर तथा बाहर दोनों जगह उत्पीड़ित है। इस कहानी के संबंध में डॉ. पुष्पपाल सिंह का विचार है कि-"यह कहानी नौकरी पेशा नारी से सम्बद्ध पूरे हिन्दी कहानी जगत की एक गौरवपूर्ण उपलब्धि है। जहाँ नौकरी पेशा स्त्री के मानसिक त्रास, संघर्षपूर्ण स्थिति, विवशता, जीवन को उसी ढर्रे पर जीने की मजबूरी, नौकरी के कारण पति तथा संतान से दूरी, रिश्तों, रस्मों और सामाजिक संबंधों को तंग दस्त होते हुए भी पूरा करने की अभिशप्त स्थिति, इतना कुछ कमाते हुए भी स्वयं अपने लिये कुछ नहीं कर पाने की पीड़ा आदि का गहन चित्रण हुआ है। "12

मनीषा कुलश्रेष्ठ की कहानियों में नारी उत्पीड़न से संबंधित कुछ चित्र ग्रामीण महिलाओं की व्यथा-कथा कहते हैं तो कुछ अन्य बुद्धिजीवी महिलाओं की वेदना को व्यक्त करते हैं। उनकी 'कठपुतलियाँ', 'कड़ी दर कड़ी', 'केयर ऑफ स्वात घाटी', 'रंग', रूप', 'रस गंध', 'वीरांगना' आदि नारी उत्पीड़न के विविध कारणों को उठाने के साथ-साथ समस्या को अपने संपूर्ण आयामों के साथ व्याख्यायित भी करती हैं। उनके अनुसार स्त्री की विडम्बना यह है कि वह प्रज्ञा एवम् गर्भाशय के मध्य त्रिशंकु बन जाती है और इस स्थिति के कारण उसका पता उसकी निजी पहचान खत्म हो जाती है। स्त्री को मात्र गर्भाशय बनना स्वीकार नहीं और पुरुष को उसका प्रज्ञा बनना। कहना न होगा कि उनकी दृष्टि में स्त्री उत्पीड़न का कारण भी यही है। मनीषा कुलश्रेष्ठ लिखती हैं- "मेरा पता क्या पूछते हो। मैं तो प्रज्ञा और गर्भाशय के मध्य उल्टी लटकी हूँ। प्रज्ञा आसमान छूना चाहती है। गर्भाशय धरती में जड़ें धसाये है। फिर भी हाँ मेरा पता है, तुम सुनलो, सब सुनलें मैं गार्गी केयर ऑफ याज्ञवलक्य, मैं दुश्चरित्र अहिल्या केयर ऑफ गौतम ऋषि, मैं भंवरी देवी, मैं रूप कुंवर, केयर ऑफ लोक पंचायत, केयर ऑफ ऑनर किलिंग, केयर ऑफ चैस्टिटी, पब में पीटी जाने वाली लड़की हूँ, केयर ऑफ शिव सेना, नाजनीन फरहदी हूँ, केयर ऑफ तेहरान जेल। सरे आम कोड़े खाने वाली वो कमसिन लड़की केयर ऑफ स्वातघाटी। "13 कहने की आवश्कता नहीं कि इन पंक्तियों द्वारा मनीषा यह सिद्ध करना चाहती हैं कि उत्पीड़न एक ऐसी सार्वभौमिक प्रक्रिया है जो देश, काल, स्थान से परे स्त्रियाँ निरंतर सहन कर रही हैं। स्त्रियों को अपने उत्पीड़न के प्रति सचेत करना तथा प्रतिकार के लिए प्रतिबद्ध करना ही मनीषा कुलश्रेष्ठ के लेखन का मूल ध्येय है।

चितकोबरा' तथा 'कठगुलाब' जैसे उपन्यासों की लेखिका मृदुला गर्ग की छवि नारी के देह-धर्म और काम संबंधों को चित्रित करने वाली बोल्ड लेखिका की है परंतु स्त्री उत्पीड़न विशेषतः स्त्री के मानसिक उत्पीड़न तथा उपेक्षा के जो चित्र उन्होंने खींचे हैं वे भी कम प्रभावोत्पादक नहीं हैं। उनकी 'तीन किलो की छोरी', 'कितनी कैदें', 'बर्फ बनी बारिश', 'मीरा नाची', 'बीच का मौसम', 'वह मैं थी' आदि विभिन्न संदर्भों में भिन्न-भिन्न उम्र, स्तर तथा परिवेश की महिलाओं के उत्पीड़न को उठाने के साथ-साथ उसके कारणों को ढूंढ़ने का भी प्रयास करती हैं। मृदुला जी की दृष्टि में 'अपनी उत्पीड़ित दशा के लिए एक हद तक नारी स्वयं ही जिम्मेदार है। कानूनी, राजनीतिक और आर्थिक अधिकार

ISSN : 3108-0294
Asha Paras Vahuvishyak Bhartiya Shodh-Patrika
(BI-ANNUAL PEER-REVIEWED, ONLINE RESEACH JOURNAL)
आशा पारस वहुविषयक भारतीय शोध-पत्रिका
(अर्द्धवार्षिक सहकर्मी-समीक्षित, ऑनलाइन शोध पत्रिका)
खंड-2, अंक-1, अप्रैल-सितंबर, 2026, apvbsp@gmail.com www.apvbsp.com

मिलना तभी सार्थक हो सकता है जब उसे सामाजिक स्वीकृति भी मिले। आपसी संबंधों में और परिवार के भीतर होने वाले अन्याय और उत्पीड़न के लिए यह और भी जरूरी है वरना अधिकार स्वयं शोषण का माध्यम बन जाते हैं"। आगे वह लिखती हैं- "स्थिति यह है कि नारी के पास अधिकार तो है पर निर्णय लेने का सामर्थ्य नहीं है। काफी हद तक यह आर्थिक आत्म निर्भरता न होने के कारण है पर आर्थिक सक्षमता के बावजूद भी स्थिति में बदलाव नहीं आ पाता तो इसलिए कि नारी अपने को निर्णय शक्ति नहीं मान पाती। सामाजिक स्वीकृति के साथ इस बात का भी महत्व है कि नारी के मन में उसकी अपनी क्या छवि है। वरना बहुत बार लड़की के शिक्षित और कमाऊ होने पर खुद उसके माँ-बाप उसका शोषण करने लगते हैं।"" जाहिर है कि मृदुला गर्ग आधुनिक स्त्री को अपनी इन कहानियों के माध्यम से आत्म चेतना विकसित करने तथा निर्णायक शक्ति बनने का विमर्श देती हैं।

मृणाल पांडे की कहानियों में अधिकांशतः अभिजात्य उच्च वर्ग की स्त्रियों के अकेलेपन, संत्रास, दहशत आदि का चित्रण है परंतु कहानी 'बन्तों में ग्रामीण किशोरी तथा 'रिक्ति' में मध्यम वर्गीय किशोरी को पितृसत्तात्मक रवैये के कारण उत्पीड़ित होते दिखाया गया है। 'प्रतिशोध' तथा 'हमसफर' कहानियों में क्रमशः नारी के प्रति पुरूष के प्रतिशोधात्मक, नकारात्मक दृष्टिकोण के कारण सद्धरित्र स्त्री को लांछित कर उत्पीड़ित करने तथा सफर के दौरान महिलाओं के समाज विरोधी तत्वों द्वारा उत्पीड़ित किये जाने का चित्रण है। मृणाल जी की मान्यता है कि-"ऊपर-ऊपर से हम ज्यादा सम्भ्रान्त और शिष्ट भले ही दीखने लगे हों, लेकिन आम स्त्रियों के प्रति आज भी आम भारतीय का रवैया या तो उदासीनता या बड़प्पन के दम्भ और अनुग्रह से भरा है और पढ़ी-लिखी समर्थ युवा स्त्रियों के उत्पीड़न की घटनाओं को लेकर चौपाल से संसद तक में शंका, उपहास, ईर्ष्या और तिरस्कार ही आम हैं। इसका कैसा गहरा असर औरतों के आयुष्य, उनकी शिक्षा-दीक्षा और घर-बाहर उनके संचरण की क्षमता पर पड़ता गया है। देश के सम्पन्न-विपन्न उत्तरी और दक्षिणी तमाम राज्यों में स्त्रियों की घटती तादाद और स्त्रियाँ-बच्चियों के साथ बलात्कार, दहेज उत्पीड़न और घरेलू हिंसा की बढ़ती वारदातें इसकी गवाही दे रहे हैं। "15

मेहरुन्निसा परवेज की रचनाओं में रूढ़, धार्मिक, सामाजिक मान्यताओं के कारण होने वाले स्त्री उत्पीड़न के अतिरिक्त आदिवासी महिलाओं के उत्पीड़न को भी दर्शाया गया है। उनकी कुछ नायिकाएँ पति एवम् परिवार द्वारा की गई उपेक्षा तथा लालच के कारण भी उत्पीड़ित हैं। 'अपने लोग', 'अपने होने का एहसास', 'अयोध्या से वापसी', 'जीवन मंथन', 'बूंद का हक', 'लौट आओ बाबू जी आदि कहानियाँ इस दृष्टि से अप्रतिम बन पड़ी हैं। आर्थिक निर्भर, सक्षम लड़कियों का उत्पीड़न भी उनकी दृष्टि से छुपा नहीं है', अकेला गुलमोहर' तथा 'सजा' कहानी इसके प्रमाण हैं। उनकी पूर्ववर्ती रचनाओं में उत्पीड़ित स्त्री आँसू बहाती नजर आती है परंतु परिवर्ती रचनाओं में वह अधिकांशतः इन परिस्थितियों के विरूद्ध संघर्ष करती है। अपनी रचनाओं के विषय में वे लिखती हैं- "मैंने अपनी कलम से नारी की व्यथा लिखी है, बदले में मुझे क्या मिला? इसका ब्यौरा मैं नहीं देना चाहती। बस इतना चाहती हूँ कि मेरी कहानी को पढ़कर किसी एक नारी को भी जिन्दगी का सच मिल जाए तो यह मेरा ईनाम होगा।"16

ISSN : 3108-0294
Asha Paras Vahuvishyak Bhartiya Shodh-Patrika
(BI-ANNUAL PEER-REVIEWED, ONLINE RESEACH JOURNAL)
आशा पारस वहुविषयक भारतीय शोध-पत्रिका
(अर्द्धवार्षिक सहकर्मी-समीक्षित, ऑनलाइन शोध पत्रिका)
खंड-2, अंक-1, अप्रैल-सितंबर, 2026, apvbsp@gmail.com www.apvbsp.com

मैत्रेयी पुष्पा की कहानियाँ मूलतः नारी उत्पीड़न के ग्रामीण संदर्भों को उठाती हैं। 'उज्रदारी', 'सहचर', 'अपना-अपना आकाश', 'फैसला', 'पगला गई है भगवती', 'बहेलिए', 'बेटी', 'मन नहीं दस बीस', 'भंवर' आदि का परिदृश्य कहीं न कहीं वैवाहिक एवम् पारिवारिक उत्पीड़न पर आधारित है जबकि 'केतकी' 'आक्षेप' आदि कहानियाँ सामाजिक उत्पीड़न को दर्शाती हैं। उनके उपन्यासों में भी ग्रामीण स्त्रियों के उत्पीड़न चित्र कम नहीं हैं, 'इदन्नमम्', 'चाक', 'अल्मा कबूतरी', 'बेतवा बहती रही' आदि इसके उदाहरण है परंतु इससे कहीं भिन्न उनका उपन्यास 'विजन' एक पढ़ी-लिखी नेत्र विशेषज्ञ स्त्री के पितृसत्ता के कारण हुए उत्पीड़न को दर्शाता है। समग्रतः मैत्रेयी का कथा साहित्य नारी के बहुआयामी उत्पीड़न को न सिर्फ प्रस्तुत करता है अपितु स्त्री को इस उत्पीड़न से बाहर निकलने की राह भी सुझाता है। वैचारिक रूप से मैत्रेयी पुष्पा यह मानती हैं स्त्री के प्रति हिंसा का शिक्षा या आमदनी से कोई लेना-देना नहीं है, स्त्री को पुलिस सुरक्षा देना भी इसका निदान नहीं है। उनके शब्दों में-"यह तो ऐसी मालिकाना दादागिरी है, जिसका पुरूष खुद को मान्यता प्राप्त अधिकारी मानता है। असुरक्षित हालात में हमारे समाज में शिक्षित और अशिक्षित दोनों महिलाएँ हैं। हमलावर के रूप में अफसर, क्लर्क, मैकेनिक या मजदूर में से कोई भी हो सकता है। यह मामला नर और मादा का बना हुआ है।"

वह लिखती हैं कि- "मर्दों को इंसानियत का पाठ पढ़ना चाहिए जो हैवानियत पर उतर आते हैं। उन्हीं को अपने ऊपर अंकुश रखना है, जो खुद को पुरूष के नाते सांड की तरह छुट्टा समझते हैं।"""

सुधा अरोड़ा की कहानियों में सभी वर्गों की नारियों के उत्पीड़न चित्र मिलते हैं। यद्यपि यह चित्र परिमाण में कम है परंतु उनकी प्रभावोत्पादकता से इंकार नहीं किया जा सकता। 'महानगर की मैथिली', 'रहोगी तुम वही', 'जानकी नामा', 'तेरहवें माले की ज़िन्दगी', 'अन्नपूर्णा मंडल की आखिरी चिट्ठी इस संदर्भ में विशेष उल्लेखनीय हैं। उनकी कहानियाँ नारी के पारिवारिक उत्पीड़न के अतिरिक्त साम्प्रदायिक हादसों तथा महानगरीय सभ्यता के मध्य लुप्त होती संवेदनशीलता के कारण उत्पीड़ित स्त्री की पीड़ा का भी चित्रण है। समग्रतः सुधा जी समकालीन परिवेश पर दृष्टि रखते हुये स्त्री पीड़ा को चित्रित कर रही हैं। महिलाओं को उत्पीड़न एवम् शोषण से बचने हेतु आर्थिक आत्मनिर्भरता का सुझाव देती हुई वह लिखती हैं कि-"कुल जमा बात यह है कि पति चाहे कितना भी दौलतमन्द या प्रतिष्ठित क्यों न हो, एक औरत को थोड़ी सी 'स्पेस' या साँसे ले पाने की जगह अपने लिए जरूर रखनी चाहिए कि वह आड़े वक्त अपने पति की आर्थिक दया से अलग अपने पैरों पर खड़ी हो सके, उसके और उसके पति के बीच एक मालिक और गुलाम का रिश्ता न रहे, जो अन्ततः स्वामी या मालिक की मर्जी से ही परिचालित होता है। दोनों एक-दूसरे के साथी और सहयोगी बनकर रहें, इसके लिए जरूरी है कि घर-गृहस्थी के कार्यक्षेत्र का बँटवारा भी सानुपातिक हो। "18

सूर्यबाला स्त्री जीवन की द्वंद्व ग्रस्तता, लाचारी आदि को विस्तृत परिवेश में चित्रित करती हैं। उनकी रचनाओं में एक ओर जहाँ पारिवारिक उत्पीड़न के चित्र दृष्टिगत होते हैं, वहीं 'दादी और रिमोट कंट्रोल' तथा 'जश्न' जैसी कहानियाँ वृद्ध पीढ़ी के उत्पीड़न को आधुनिकीकरण तथा शहरीकरण से जोड़कर देखती हैं। सूर्यबाला जी स्त्री उत्पीड़न का प्रमुख कारक मीडिया को मानती हैं। वे लिखती हैं कि-"दिन-रात घरों में घुसकर बैठे, सेटेलाइट मीडिया के हवाले से

ISSN : 3108-0294
Asha Paras Vahuvishyak Bhartiya Shodh-Patrika
(BI-ANNUAL PEER-REVIEWED, ONLINE RESEACH JOURNAL)
आशा पारस वहुविषयक भारतीय शोध-पत्रिका
(अर्द्धवार्षिक सहकर्मी-समीक्षित, ऑनलाइन शोध पत्रिका)
खंड-2, अंक-1, अप्रैल-सितंबर, 2026, apvbsp@gmail.com www.apvbsp.com

जो अश्लीलता, नग्नता और यौनचारी प्रवृत्तियाँ लगातार उड़ेली जा रही हैं, उनका असर भी सभी आयु वर्गों पर, विशेषकर युवा, किशोर मनों पर होगा ही। अपराधी वृत्तियाँ इस कदर हावी हो जाएँगी कि चौदह-चौदह सालों के किशोर, रिंकू पाटिलों और रूपालियों को खुले आम मिट्टी का तेल छिड़कर जलाएँगे।" इसके अतिरिक्त कहीं न कहीं वे स्त्री को भी अपने शोषण तथा उत्पीड़न के लिए जिम्मेदार ठहराती हैं। उनका मानना है कि स्त्री को उच्छृंखलता त्याग कर अपनी सीमा रेखा स्वयं तय करनी चाहिए।

सिम्मी हर्षिता भी उन लेखिकाओं में है जिन्होंने परिमाण में कम लिखा है परंतु जो भी लिखा है अत्यंत श्रम एवम् संपूर्णता के साथ। सिम्मी हर्षिता की 90 के दशक के उपरांत लिखी कहानियों में 'इस तरह की बातें', 'उस फूल का नाम', 'बंजारन हवा', 'मैं आ रहा हूँ' आदि इस दृष्टि से विशेष उल्लेखनीय है। नवयुवा लड़कियों को पितृसत्तात्मक पारिवारिक वर्जनाओं में जकड़कर व्यक्तित्वहीन बना देने तथा उन्हें निर्णय की स्वतंत्रता न देकर उनके व्यक्तित्व को कुंठित कर देने का चित्रण इन्होंने अत्यंत संवेदनशीलता के साथ किया है। उत्पीड़ित स्त्री को उनका विमर्श है कि- "पति या प्रेमी के साथ जीते हुए, उसकी पसंद को जीते हुए, औरत को अपने जीवन के क्षितिज का भी विस्तार करते रहना चाहिए। रोजमर्रा की घरेलू जिन्दगी के अतिरिक्त भी कोई रूचि बनाए रखनी चाहिए जो आपसी संबंधों में परिवर्तन या दरार आने की स्थिति में धक्का लगने या आहत होने से बचाए। तनाव ग्रस्त होकर रोने, शिकवे और शंका पालने या मानसिक संतुलन खोने के बदले उन दूसरे रचनात्मक कामों में व्यस्त हो जाएँ। समझदारी और खुशी से जीने का यह एक बहुत सरल ढंग है कि व्यक्ति खुशी के नये रास्ते तलाश ले, दुखदाई हदों का ही कैदी न बना रहे। किसी भी व्यक्ति या रिश्ते को अपने जीवन का अंतिम पड़ाव या सीमा न मान ले, जिससे परे कुछ भी होना शेष न हो। निष्ठा जरूर चाहिए पर सहज जीवन की कीमत पर नहीं। "20

समग्रतः इस संपूर्ण विवेचन से यह दृष्टिगत होता है कि आलोच्य लेखिकाएँ न सिर्फ स्त्री उत्पीड़न के कारणों को रेखांकित करती हैं अपितु उसके गंभीर परिणामों के लिए भी संपूर्ण मानव जाति को सजग कर रही हैं। उत्पीड़न के कारण एक स्त्री का कुंठित होना, असहज होना अथवा ज़िन्दगी से पलायन कर जाना उसके परिवार के लिए एक बढ़ी क्षति होने के साथ-साथ मानवता पर भी कलंक है।

वस्तुतः कथा लेखिकाएँ एक ऐसी संवेनदशील समाज का स्वप्न देखती हैं जहाँ स्त्री अपनी इच्छा के अनुरूप अपने व्यक्तित्व का निर्माण कर सकें। यहीं नहीं वे पुरूष को भी एक सखा अथवा सहचर के रूप में देखना चाहती हैं जो उनके साथ निरंकुश शासक जैसा व्यवहार न कर सौहार्दपूर्ण संबंध स्थापित कर सके।

जाहिर है कि स्त्री की लड़ाई पुरूष से नहीं, पितृसत्ता की देन उस लिंगभेदवादी दृष्टिकोण से है जो स्त्री को मानवी नहीं मात्र भोग्या अथवा वस्तु समझने का पक्षपाती है। इस दृष्टिकोण के कारण ही एक स्त्री खरीदी बेची जाती है, क्रूर व्यवहार का शिकार होती है तथा अपहृत एवम् बलात्कृत होती है। समाज में व्याप्त स्त्री विरोधी परंपराएँ जैसे कन्यावध, दहेज प्रथा, सती प्रथा, विधवाओं को मांगलिक कार्यों से वंचित किया जाना, स्त्रियो का पैतृक संपत्ति में हिस्सा न

ISSN : 3108-0294
Asha Paras Vahuvishyak Bhartiya Shodh-Patrika
(BI-ANNUAL PEER-REVIEWED, ONLINE RESEACH JOURNAL)
आशा पारस वहुविषयक भारतीय शोध-पत्रिका
(अर्द्धवार्षिक सहकर्मी-समीक्षित, ऑनलाइन शोध पत्रिका)
खंड-2, अंक-1, अप्रैल-सितंबर, 2026, apvbsp@gmail.com www.apvbsp.com

होना, डायन, टोहनी, सतीत्व परीक्षा जैसी कुप्रथाएँ, यहाँ तक कि परिवारों में भी स्त्री को पुरूष की तुलना में महत्वहीन समझा जाना, उनके पालन-पोषण में भेदभाव, उचित स्वास्थ्य सुविधाओं का अभाव, शिक्षा से वंचित किया जाना आदि भी इसी दृष्टिकोण का परिणाम हैं।

स्त्री उत्पीड़न का एक अन्य कारण उसे निर्णायक स्वतंत्रता प्राप्त न होना भी है। परंपरागत बंधनों में स्त्री को इतना अधिक पंगू बना दिया गया है कि वह शिक्षा, विवाह, नौकरी जैसे निजी निर्णयों के लिए ही नहीं वेशभूषा एवम् खानपान जैसे छोटे-छोटे निर्णयों के लिए भी परमुखापेक्षी बन गई है। यही नहीं वे यह भी मानती हैं कि युगों-युगों से चली आ रही सत्ता की राजनीति ने स्त्री को परिधि पर फेंकने के अतिरिक्त स्त्री के मन में पुरुष की श्रेष्ठता का भय कुछ इस तरह बैठा दिया है कि कई बार वह स्वयं पितृसत्तात्मक मूल्यों की वाहिका बन जाती है और तत्कालीन लाभ को दृष्टिगत रखकर स्वयं स्त्री को ही उत्पीड़ित करने से नहीं चूकती। लेखिकाएँ निरंतर यह भी सिद्ध कर रही हैं कि 'यौन उत्पीड़न' के प्रकरणों में स्त्री की चुप्पी न सिर्फ अपराधी के दुःसाहस को बढ़ावा देती है अपितु उसे पुनः-पुनः ऐसे अपराध करने को प्रेरित भी करती है। अतः स्त्री को मुखर स्वरों में न केवल अपने प्रति हो रहे अत्याचारों को व्यक्त करना चाहिए बल्कि उनका साहस पूर्ण प्रतिकार भी करना चाहिए परंतु इतना होने पर भी इस प्रकार का कोई अपराध घटित हो ही जाता है तो उसका हल कायर पलायन या मृत्यु वरण नहीं अपितु अपराधी को दंड दिलाना एवम् स्वाभिमान से जीवन निर्वाह करना भी है। आलोच्य लेखिकाओं की एक बड़ी उपलब्धि उत्पीड़न तथा शोषण के विरूद्ध स्त्री की उस आवाज को उठाना है जो पितृसत्तात्मक दमन के कारण घुट कर रह गई थी तो दूसरी ओर कहीं अधिक महत्वपूर्ण उपलब्धि वे सक्रिय एवम् सजग प्रयास है जो वह अपने मानवतावादी दृष्टिकोण के कारण आगामी पीढ़ी की सोच बदलने तथा उसे अपेक्षाकृत विस्तृत आकाश देने के लिए कर रही हैं। यहाँ यह उल्लेखित करना भी आवश्यक जान पड़ता है कि 90 के दशक के पूर्व रचित कथा साहित्य में जहाँ स्त्री के पारिवारिक और कार्यालयीन उत्पीड़न के चित्र अधिक दृष्टिगत होते हैं वहीं बाद के कथा साहित्य में यौन उत्पीड़न, भूमण्डलीकरण तथा आधुनिकीकरण के कारण उत्पीड़ित होती स्त्री के अतिरिक्त साम्प्रदायिकता एवम् मानव निर्मित त्रासदियों के कारण उत्पीड़ित होती स्त्री छवि का अंकन अधिक सूक्ष्मता से किया गया है।

लेखिकाएँ स्त्री देह को मात्र वस्तु बना देने वाली बाजार की पूँजीवादी ताकतों के विरूद्ध भी भावी पीढ़ी विशेषतः स्त्री को निरंतर सचेत कर रही हैं। वे अपने रचनाओं में मानवता के सम्भावित खतरों का भावी दर्शन करा रही हैं और निरंतर यह संदेश भी दे रही हैं कि भौतिकता और स्वतंत्रता एक सीमा के पश्चात् घातक हैं। वे अपनी कथाओं विशेषतः उपन्यासों के माध्यम से स्त्रियों को यह संदेश प्रेषित कर रही हैं कि अपने प्रति हो रहे दुर्व्यवहार के विरूद्ध प्रतिकार करें, अन्याय के विरूद्ध आवाज उठायें, अपमानित जीवन व्यतीत करने की अपेक्षा संघर्ष एवम् विद्रोह द्वारा अपने अस्तित्व एवम् अस्मिता की रक्षा करें। वह यह भी चाहती हैं कि स्त्रियाँ तत्कालीन लाभ को दृष्टिगत रख पितृसत्ता की वाहिका न बने अपितु एक जुट हो, सहानुभूति के साथ परस्पर सखीभाव से एक दूसरे के समर्थन में खड़ी रहें।

जहाँ तक स्त्री कथाकारों की सीमाओं का प्रश्न है अधिसंख्य पुरूष आलोचक स्त्री लेखन को घर की चारदीवारी का रोना, अर्थ एवम् काम केन्द्रित लेखन, भ्रमित अपरिपक्व लेखन, व्यक्तिगत कुंठाओं की अभिव्यक्ति का साधन, आदि मानने से परहेज नहीं करते परंतु स्त्री लेखन विशेषतः 1990 के पश्चात् के लेखन के अंतर्विषय का मूल्यांकन करने के पश्चात् हमारी स्थापना यह है कि स्त्री लेखन, स्त्री उत्पीड़न को दर्शाकर, स्त्री के संघर्ष एवम् विद्रोह को उचित बताकर स्त्री को मुक्ति मार्ग पर अग्रसर करने का अभिलाषी है। आज लेखिकाएँ समकालीन परिदृश्य को लेकर न केवल सजग हैं अपितु वैचारिक रूप से अत्यंत स्पष्ट भी Sí. प्राचीन रूढ मान्यताओं और परम्परागत नैतिकता के प्रति उनका आक्रोश तथ्यों को तर्क की कसौटी पर कसने के पश्चात् ही अभिव्यक्त हुआ है। उनका लेखन सम सामयिक स्त्री समस्याओं को दर्पण भी है और स्त्री मुक्ति का धारदार हथियार भी। कहने की आवश्यकता नहीं कि इस लेखन ध्येय अंततः स्त्री सशक्तिकरण ही है। इतना अवश्य है कि हर लेखिका का मुक्ति स्वप्न उसकी अपनी स्वानुभूति पर आधारित है। स्त्री लेखन में आने वाले अंतर्विरोध भी संभवतः इसी कारण हैं। दूसरे शब्दों में कहें तो कुछ विभिन्नताओं के पश्चात् भी सभी लेखिकाएँ स्त्री मुद्दों के प्रति प्रतिबद्ध हैं, इतना अवश्य है कि हम इन स्वरो मे और प्रखरता की अपेक्षा करते हैं, परंतु फिर भी वे स्पष्ट अवश्य हैं।

यहाँ यह उल्लेख करना भी जरुरी है कि उत्पीड़न के कतिपय प्रकार जैसे मादा भ्रूण-हत्या, महिलाओ की तस्करी तथा अपहरण एवं समाज सुधार व जन-जागरण अभियान में लगी महिलाओं के साथ हो रहा दुर्व्यवहार आदि जैसे विषय महिला-लेखन में व्यापक रुप से नही आ पाये हैं। इसका एक कारण यह भी है कि लेखिकाएँ महिला आन्दोलनों में सक्रिय भागीदारी न निबाहकर मात्र कल्पना आश्रित लेखन कर रही हैं। लेखिका का अपना अनुभव उसे सीमित क्षेत्र, सीमित वर्ग एवम् सीमित समस्याओं का ही साक्षात्कार करा पाता है। महिला प्रश्नों को सैद्धांतिक एवम् व्यावहारिक धरातल पर समझने के लिए लेखिकाओं को बुद्धिजीवियों व महिला कार्यकर्ताओं से जुड़ना होगा, स्त्री संघर्षों, स्त्री आंदोलनों का सहभागी होना होगा तभी वे अपनी रचना के लिए वृहतर फलक का निर्माण कर पाएँगीं। कात्यायनी के शब्दों में अब वह समय आ गया है कि जब "नारी उत्पीडन की सही वैज्ञानिक समझदारी और सर्वहारा दृष्टिकोण लेकर गोर्की जैसी उग्रता और लुशून जैसी बारीक तीखी मार के साथ रचना के धरातल पर उतरना होगा और इस मोर्चे पर लड़ना होगा, यह जन पक्षधर जिम्मेदार रचनाकारों का एक बहुत बड़ा दायित्व है। "2" दायित्व तो सामान्य स्त्री का भी कम नही है। उसे पुरूष वर्चस्व की मजबूत दीवारों को तोड़ना होगा, शोषण के हथियार को स्वाभिमान, सम्मान, हक और हिस्सेदारी से भोथरा करना होगा। आत्मदया और आत्मग्लानि छोड़ स्वाभिमानी-आत्मविश्वासी भूमिका निबाहनी होगी ताकि आतातायी पुरूष समाज आक्रान्त हो सके। उसे महिला कथाकारों के विमर्श को हृदयंगम कर नवीन आत्मविश्वास से दीप्त होना होगा। प्रतिरोधात्मक शक्ति जुटाकर उत्पीड़न के चक्रव्यूह को तोड़ना होगा। उचित विद्रोह की अभिव्यक्ति अब अपराध नहीं समय की आवश्यकता है।

'बेघर' की संजीवनी जैसी भोग कर छोड़ी गई प्रेमिकाएं अकेले असमय बुढ़ा जाने को अब अभिशप्त नहीं रहीं वरन 'आवाँ' की स्मिता की तरह हाथ और देह को पौंछ कर साफ और नई हो जाने के आत्मविश्वास से दीप्त हैं, यह महिला

ISSN : 3108-0294
Asha Paras Vahuvishyak Bhartiya Shodh-Patrika
(BI-ANNUAL PEER-REVIEWED, ONLINE RESEACH JOURNAL)
आशा पारस वहुविषयक भारतीय शोध-पत्रिका
(अर्द्धवार्षिक सहकर्मी-समीक्षित, ऑनलाइन शोध पत्रिका)
ISSN : 3108-0294
खंड-2, अंक-1, अप्रैल-सितंबर, 2026, apvbsp@gmail.com www.apvbsp.com

लेखन का ही प्रदेय है। खिसियाया सामंतवादी सबल पुरूष क्या करे? क्या कपट-दमन-आतंक का पुनः पुनः चक्रव्यूह रचाएं अथवा स्त्री की आत्मविश्वासी कमसिन देह को अपने में मुलायमियत से समेटने को प्रस्तुत हो जायें?

संदर्भ सूची-

1. उर्मिला शिरीष, संग्रह-लकीर एवम् अन्य कहानियाँ, पृष्ठ-121
2. उर्मिला शिरीष, संग्रह-शहर में अकेली लड़की, पृष्ठ-10
3. कृष्णा सोबती, उपन्यास-समय सरगम, पृष्ठ-92
4. चन्द्रकांता, उपन्यास-कथा सतीसर, पृष्ठ-491
5. चन्द्रकांता, उपन्यास-कथा सतीसर, पृष्ठ-556
6. चित्रा मुद्गल, उपन्यास-आंवा, पृष्ठ-541
7. इंटरनेटलिंक http://www. hindi nest.com/kahani/03019/htm
8. डॉ. वीरेन्द्र सिंह यादव-महिला कथाकारों के उपन्यासों में समय, समाज और संवेदना, पृष्ठ-40
9. नासिरा शर्मा का साक्षत्कार 'प्रजा-भारत' 7 अक्टूबर, 2008
10. प्रभा खेतान, उपन्यास-आओ पेपे घर चलें, पृष्ठ-54
11. सुधा अरोड़ा, औरत की कहानी, पृष्ठ-49
12. पुष्पपाल सिंह, समकालीन कहानी युगबोध का संदर्भ, पृष्ठ-172
13. इंटरनेटलिंक http://www. hindi nest.com/kahani2009/012/htm
14. मृदुला गर्ग, संग्रह-समागम, पृष्ठ-130
15. मृणाल पांडे, जहाँ औरतें गढ़ी जाती है, पृष्ठ-72-73
16. मेहरून्निसा परवेज, संग्रह-सोने का बेसर (मेरी बात), पृष्ठ-20
17. मैत्रेयी पुष्पा, स्तंभ नयी दस्तक, वनिता, फरवरी, 2011
18. सं. सुधा अरोड़ा, औरत की कहानी, पृष्ठ-197
19. सं. सुधा अरोड़ा, औरत की कहानी, पृष्ठ-140
20. सिम्मी हर्षिता, संग्रह तैंतीस कहानियाँ, पृष्ठ-336
21. कात्यायनी, दुर्ग द्वार पर दस्तक, पृष्ठ-41